

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 24: सांख्य-दर्शन

5 October 2026



भगवान् श्रीकृष्ण उद्धव को सांख्य का प्राचीन ज्ञान प्रकट करते हैं — किस प्रकार एक अखण्ड आत्मा प्रकृति तथा पुरुष के रूप में प्रकट हुई, किस प्रकार उस विस्तार से ब्रह्माण्ड तथा उसके लोक उत्पन्न हुए, और किस प्रकार प्रलय के समय यह सम्पूर्ण श्रृंखला शान्तिपूर्वक पुनः उसी एक आत्मा में लीन हो जाती है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। पिछले प्रवचन में परिव्राजक की गीता पूर्ण करने के पश्चात्, भगवान् अब स्वयं अपनी इच्छा से एक गहन रहस्य उद्घाटित करते हैं — कपिलादि महर्षियों द्वारा प्रतिपादित सांख्य का प्राचीन सिद्धान्त। इस तत्त्व को जानना, वे उद्धव से कहते हैं, मूल भ्रान्ति से तत्काल मुक्त हो जाना है — वह भ्रान्ति जो एक वस्तु को दूसरी से पृथक् मानने से उत्पन्न होती है। वे सृष्टि की सम्पूर्ण परम्परा का वर्णन करते हैं: एक ही आधार से द्रष्टा तथा दृश्य का उदय, मन तथा तत्त्वों की वह सीढ़ी जो ब्रह्माण्ड तथा कमल पर विराजमान ब्रह्मा तक पहुँचती है, और प्रलय के समय वही सीढ़ी शान्तिपूर्वक पुनः उसी एक आत्मा में समा जाती है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 24 (चतुर्विंश प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: सांख्य-दर्शन
- प्रधान वक्ता: श्रीकृष्ण, उद्धव को उपदेश देते हुए; समस्त सुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को कहा गया
- प्रधान श्रोता: उद्धव; तथा राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: द्वारका, भगवान् के उद्धव के साथ निरन्तर संवाद में
- केन्द्रीय विषय: सृष्टि तथा प्रलय का सांख्य-दर्शन — प्रकृति तथा पुरुष का तत्त्वों, ब्रह्माण्ड तथा त्रिलोक में विस्तार, और उनका क्रमशः विपरीत दिशा में एक आत्मा में लय
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 24, श्लोक 1-29
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 23 में, भगवान् ने उद्धव को वह गीत सुनाया जिसे अवन्ति के एक परिव्राजक ब्राह्मण ने गाया था — जिसका धन छिन गया और जिन सम्बन्धियों को उसने प्रसन्न करना चाहा, उन्होंने ही उसे दुर्व्यवहार से पीड़ित किया, किन्तु उसी हानि में उसने वैराग्य का बीज पाया। वह गीत श्रीकृष्ण के चरणों में समर्पण के साथ समाप्त हुआ, और भगवान् ने कहा कि जो कोई इसे एकाग्र मन से सुनता, दोहराता या स्मरण करता है, वह द्वन्द्वों से पुनः कभी अभिभूत नहीं होता। यह अध्याय मन को स्थिर करने के उसी संकल्प को आगे बढ़ाता है, अब सांख्य के दार्शनिक आधार को उद्घाटित करते हुए।

भगवान् सांख्य का उपदेश आरम्भ करते हैं

भगवान् ने पुनः बोलना आरम्भ किया। वे अब, उद्धव से कहा, कपिलादि महर्षियों द्वारा सुनिश्चित सांख्य के तत्त्व को पूर्णतः प्रकट करेंगे — एक ऐसा तत्त्व जिसे जानकर मनुष्य तत्काल उस भ्रान्ति को त्याग देता है जो एक वस्तु को दूसरी से भिन्न मानने से उत्पन्न होती है।

श्रीभगवानुवाच

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि साङ्ख्यं पूर्वैर्विनिश्चितम् ।

यद् विज्ञाय पुमान् सद्यो जह्याद् वैकल्पिकं भ्रमम् ॥ १ ॥

śrī-bhagavān uvāca atha te sampravakṣyāmi sāṅkhyam pūrvair viniścitam yad vijñāya pumān sadyo jahyād vaikalpikam bhramam

अर्थ: भगवान् ने कहा: मैं अब तुम्हें प्राचीन ऋषियों द्वारा सुनिश्चित सांख्य का पूर्ण वर्णन करूँगा, जिसे जानकर मनुष्य भेद-बुद्धि से उत्पन्न भ्रान्ति को तत्काल त्याग देता है। (श्लोक 1)

एक अखण्ड सत्ता दो में प्रकट होती है

अन्तिम प्रलय के समय, भगवान् ने आगे कहा, तथा सृष्टि के आरम्भ में प्रथम सत्ययुग में, और आज भी जिसकी बुद्धि निर्मल है उसके लिए, द्रष्टा तथा समस्त दृश्य एक ही अखण्ड सत्ता थे — ब्रह्म, वाणी तथा मन की पहुँच से परे। वह एक सत्ता मानो दो में प्रकट हुई: माया, वस्तुगत अस्तित्व, तथा उसमें प्रतिबिम्बित आत्मा। इस द्वैत का एक अंश सुप्रसिद्ध प्रकृति है, जो कारण तथा कार्य दोनों को अपने में समेटे है; दूसरा अंश केवल चेतना है, जिसे पुरुष कहा जाता है।

तयोरेकतरो ह्यर्थः प्रकृतिः सोभयात्मिका ।

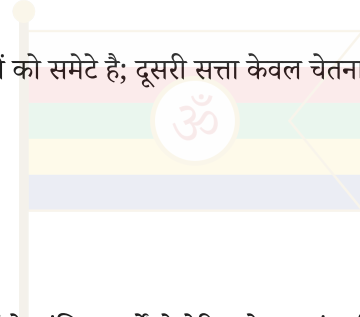
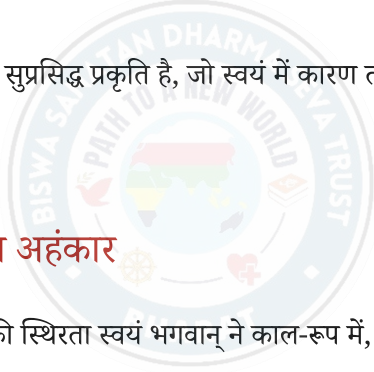
ज्ञानं त्वन्यतमो भावः पुरुषः सोऽभिधीयते ॥ ४ ॥

tayor ekataro hy arthaḥ prakṛtiḥ sobhayātmikā jñānaṁ tv anyatamo bhāvaḥ puruṣaḥ so 'bhidhiyate

अर्थ: इन दोनों में से एक सुप्रसिद्ध प्रकृति है, जो स्वयं में कारण तथा कार्य दोनों को समेटे है; दूसरी सत्ता केवल चेतना है, जिसे पुरुष कहा जाता है। (श्लोक 4)

गुण, महत्तत्त्व तथा अहंकार

उस प्रकृति से — जिसकी स्थिरता स्वयं भगवान् ने काल-रूप में, असंख्य जीवों के संचित कर्मों से प्रेरित होकर, भंग की — तीन गुण उत्पन्न हुए: तमस्, रजस् तथा सत्त्व। गुणों से महत्तत्त्व, महान् विश्व-बुद्धि, उत्पन्न हुआ, और महत्तत्त्व से अहंकार प्रकट हुआ — वह “मैं” का भाव जो आत्मा को देह से बाँधता है। यह त्रिविध अहंकार — सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक — आगे सूक्ष्म तत्त्वों, इन्द्रियों तथा मन को उत्पन्न करता है: तामसिक अंश से स्थूल पंचभूत, राजसिक अंश से ज्ञान तथा कर्म की इन्द्रियाँ, और सात्त्विक अंश से अधिष्ठाता देवता तथा मन (श्लोक 5–8)।





भगवान् द्वारा काल-रूप में प्रेरित प्रकृति से तीनों गुण उत्पन्न होते हैं, और उनसे क्रमशः महत्तत्त्व, अहंकार तथा तत्त्व विस्तृत होते हैं (श्लोक 5-8)।

ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्मा का जन्म

भगवान् की प्रेरणा से, ये समस्त श्रेणियाँ मिलकर एक साथ कार्य करती हुई ब्रह्माण्ड को जन्म देती हैं — उनका अपना क्रीड़ा-स्थल, जिसमें वे अन्तर्यामी-रूप में प्रविष्ट होते हैं। उस अण्ड के भीतर कारण-जल पर शयन करते हुए, वे गर्भोदशायी नारायण के रूप में प्रकट हुए। उनकी नाभि से एक कमल निकला, जो स्वयं विश्व का नाम धारण करता है, और उस कमल पर स्वयम्भू चतुर्मुख ब्रह्मा प्रकट हुए।

मया सञ्चोदिता भावाः सर्वे संहत्यकारिणः ।

अण्डमुत्पादयामासुर्ममायतनमुत्तमम् ॥ ९ ॥

तस्मिन्नहं समभवमण्डे सलिलसंस्थितौ ।

मम नाभ्यामभूत् पद्मं विश्वाख्यं तत्र चात्मभूः ॥ १० ॥

mayā sañcoditā bhāvāḥ sarve saṁhatya-kāriṇaḥ aṇḍam utpādayām āsur mamāyatanam uttamam

tasminn ahaṁ samabhavam aṇḍe salila-saṁsthitau mama nābhyām abhūt padmaṁ viśvākhyam tatra cātma-bhūḥ

अर्थ: मेरे द्वारा प्रेरित होकर, ये समस्त तत्त्व मिलकर ब्रह्माण्ड उत्पन्न करते हैं, जो मेरा अपना उत्तम धाम है। उसके भीतर, कारण-जल पर शयन करते हुए, मैं प्रकट हुआ; मेरी नाभि से विश्व नामक कमल उत्पन्न हुआ, और उस पर स्वयम्भू ब्रह्मा प्रकट हुए। (श्लोक 9-10)



ब्रह्माण्ड के भीतर भगवान् गर्भोद्देशायी नारायण के रूप में प्रकट होते हैं; उनकी नाभि से कमल उठता है, और उस पर स्वयम्भू ब्रह्मा (श्लोक 9-10)।

त्रिलोक, तथा उनसे परे एक गन्तव्य

रजोगुण से युक्त तथा अपनी तपस्या से बलशाली होकर, ब्रह्मा ने तब भगवान् की कृपा से तीन लोक रचे — भूलोक (पृथ्वी), भुवलोक (मध्य प्रदेश) तथा स्वर्लोक (स्वर्ग) — क्रमशः मनुष्यों, प्रेतों तथा देवताओं के निवास; इन तीनों से परे सिद्धों का लोक है, तथा पृथ्वी के नीचे असुरों तथा नागों के निवास। इन्हीं लोकों में तीनों गुणों तथा उनके कर्मों से निर्मित भाग्य फलित होते हैं। इनसे ऊपर महर्लोक, जनलोक, तपोलोक तथा सत्यलोक हैं, जो योग, तप तथा संन्यास से प्राप्त होने वाले निर्मल गन्तव्य हैं। किन्तु भगवान् का अपना धाम, उन्होंने स्पष्ट कहा, केवल एक मार्ग से प्राप्त होता है — भक्तियोग, प्रेमाभक्ति (श्लोक 11-14)।

कृष्ण स्वयं कारण, पुरुष तथा काल हैं

भगवान् स्वयं काल के रूप में, प्रत्येक कर्म के फल के विधाता, इस सृष्टि को तीनों गुणों की अनवरत धारा में उठाते तथा गिराते रहते हैं। जो कुछ भी उत्पन्न हुआ है, चाहे विशाल हो या सूक्ष्म, वह सर्वत्र प्रकृति तथा पुरुष दोनों से व्याप्त है; और वही वास्तव में सत्य है जो किसी वस्तु के आदि, मध्य तथा अन्त में एक समान रहता है — उसके क्षणिक विकार, जैसे सोने से आभूषण बनना, केवल व्यावहारिक प्रयोजन के हैं। तब भगवान् ने इस उपदेश का सार प्रकट किया।

प्रकृतिर्यस्योपादानमाधारः पुरुषः परः ।

सतोऽभिव्यञ्जकः कालो ब्रह्म तत्त्रितयं त्वहम् ॥ १९ ॥

prakṛtir yasyopādānam ādhāraḥ puruṣaḥ paraḥ sato 'bhivyañjakaḥ kālo brahma tat tritayaṁ tv aham

अर्थ: प्रकृति, जिस भौतिक कारण से यह विश्व निर्मित है; पुरुष, वह परम पुरुष जो इसका अन्तर्यामी आधार है; तथा काल, जो जो कुछ पहले से विद्यमान है उसे प्रकट करता है — ये तीनों, अनन्त ब्रह्म, मुझसे भिन्न कुछ नहीं हैं। (श्लोक 19)

यहीं भगवान् के उद्भव को दिए गए उपदेश का केन्द्र-बिन्दु है। वे केवल यह नहीं समझाते कि विश्व कैसे रचा गया है, मानो दूर से देखी जाने वाली कोई रचना-विद्या हो; वे प्रकट करते हैं कि वे स्वयं इस व्याख्या के प्रत्येक पद हैं — वह द्रव्य जिससे यह बना है, वह पुरुष जो इसका साक्षी है, तथा वह काल जो इसे प्रकट करता तथा समेट लेता है। सांख्य, यथार्थ रूप में समझा जाए तो, किसी नाम-रूप-रहित अमूर्त सत्य में समाप्त नहीं होता; यह, जैसा भगवान् ने पिछले प्रवचन के अन्त में ही दिखाया था, उनके चरणों में समर्पण में समाप्त होता है। सृष्टि की सम्पूर्ण श्रृंखला, मूल तक खोजी जाए तो, भगवान् से दूर जाने वाली सीढ़ी नहीं, अपितु उन्हीं के हाथों में सीधे लौटाने वाली सीढ़ी है।

सृष्टि, उन्होंने आगे कहा, क्रमानुसार विस्तृत होती रहती है, जब तक कि उनकी इच्छा से ही ब्रह्माण्ड पुनः विराम न पा जाए (श्लोक 15–20)।

प्रलय की घड़ी

तब, भगवान् ने कहा, जब ब्रह्माण्ड तथा उसके लोक काल-रूप उनकी ही दृष्टि से स्पर्श किए जाते हैं, वे पाँच तत्त्वों में लय के योग्य हो जाते हैं, ठीक उसी क्रम के विपरीत जिसमें वे उत्पन्न हुए थे। नश्वर शरीर अन्न में लीन होता है, अन्न बीज में, बीज पृथ्वी में, और पृथ्वी गन्ध में; गन्ध जल में, जल रस में, रस अग्नि में, अग्नि रूप में, रूप वायु में, वायु स्पर्श में, और स्पर्श आकाश में, जो शब्द में विलीन हो जाता है। इन्द्रियाँ अपने अधिष्ठाता देवताओं में लौटती हैं, देवता मन में लीन होते हैं, और मन उसी अहंकार में विलीन हो जाता है जिससे वह उत्पन्न हुआ था (श्लोक 22–25)। इस प्रकार यह श्रृंखला अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँचती है:

स लीयते महान् स्वेषु गुणेषु गुणवत्तमः । तेऽव्यक्ते सम्प्रलीयन्ते तत् काले लीयतेऽव्यये ॥ २६ ॥

कालो मायामये जीवे जीव आत्मनि मय्यजे । आत्मा केवल आत्मस्थो विकल्पापायलक्षणः ॥ २७ ॥

sa liyate mahān sveṣu guṇeṣu guṇa-vattamaḥ te 'vyakte sampralīyante tat kāle liyate 'vyaye kālo māyā-maye jīve jīva ātmani mayy aje ātmā kevala ātma-stho vikalpāpāya-lakṣaṇaḥ

अर्थ: त्रिविध अहंकार महत्तत्त्व में लीन होता है, महत्तत्त्व गुणों में, गुण अव्यक्त में, और अव्यक्त अब शान्त हो चुके काल में लीन होता है। काल माया के अधिपति उस पुरुष में विलीन होता है; और वह पुरुष, अन्ततः, मुझ अजन्मा आत्मा में — जो, पूर्ण होने के कारण, केवल स्वयं में स्थित रहता हूँ, सृष्टि तथा प्रलय के आवागमन से ही अनुमित, किन्तु अन्यत्र कहीं विलीन न होने वाला। (श्लोक 26–27)



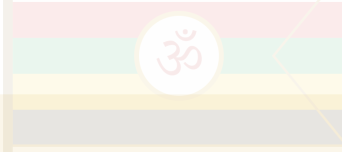
प्रलय की घड़ी में, तत्त्व तत्त्व में, मन अहंकार में, और अन्ततः अहंकार एक आत्मा की ओर लीन होता है, ठीक सृष्टि के विपरीत क्रम में (श्लोक 22-27)।

अब कोई भ्रान्ति शेष नहीं रहती

इस सम्पूर्ण प्रक्रिया पर जो स्पष्ट दृष्टि से विचार करता है, भगवान् ने पूछा, क्या उसके मन में पृथक्ता की पुरानी भ्रान्ति फिर कभी ठहर सकती है — ठीक जैसे सूर्य के उदय होते ही आकाश का अन्धकार ठहर नहीं पाता?

एवमन्वीक्षमाणस्य कथं वैकल्पिको भ्रमः ।

मनसो हृदि तिष्ठेत व्योम्नीवार्कोदये तमः ॥ २८ ॥



evam anvīkṣamāṇasya katham vaikalpiko bhramah manaso hṛdi tiṣṭheta vyomnīvārkodaye tamah

अर्थ: जिसने इस प्रकार सत्य की परीक्षा कर ली है, उसके मन में भेद की भ्रान्ति अधिक काल तक कैसे टिक सकती है — उससे अधिक नहीं जितना सूर्योदय के समय आकाश में अन्धकार टिक सकता है। (श्लोक 28)



जो इस सत्य को स्पष्ट रूप से देखता है, उसके लिए भेद की भ्रान्ति सूर्योदय होने पर अन्धकार से अधिक नहीं टिक सकती (श्लोक 28)।

यही, उन्होंने कहा, वह सांख्य-विधि है जो संशय की गाँठ को काट देती है।

एष सांख्यविधिः प्रोक्तः संशयग्रन्थिभेदनः ।
प्रतिलोमानुलोमाभ्यां परावरदृशा मया ॥ २९ ॥

eṣa sāṅkhya-vidhiḥ proktaḥ saṁśaya-granthi-bhedanaḥ pratilomānulomābhyāṁ parāvara-dṛśā mayā

अर्थ: यह सांख्य-विधि, उच्च तथा निम्न दोनों सत्तों को देखने वाले मेरे द्वारा घोषित, संशय की गाँठ को काटने वाली विधि है, जो निवृत्ति तथा प्रवृत्ति के दोनों मार्गों द्वारा यहाँ सिखाई गई है। (श्लोक 29)

इस प्रकार यह प्रवचन अपने समापन पर पहुँचता है, और कृष्ण अब उद्धव को यह दिखाने की तैयारी करते हैं कि किस प्रकार तीनों गुण प्रत्येक जीव के स्वभाव तथा गति को आकार देते हैं।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. सृष्टि से पूर्व सब कुछ एक था। प्रलय के समय, नई सृष्टि के आरम्भ में, और आज भी निर्मल दृष्टि वाले के लिए, द्रष्टा तथा दृश्य एक ही अखण्ड सत्ता हैं, जो बाद में ही प्रकृति तथा पुरुष के रूप में प्रकट होती है (श्लोक 2-4)।
2. सम्पूर्ण विश्व कृष्ण का अपना विस्तार है। मन तथा तत्त्व की प्रत्येक श्रेणी क्रमानुसार प्रकृति से उत्पन्न होती है, भगवान् द्वारा काल-रूप में प्रेरित होकर — सृष्टि में कुछ भी उनसे पृथक् नहीं है (श्लोक 5-10)।
3. कृष्ण स्वयं कारण, पुरुष तथा काल एक साथ हैं। वे केवल बाह्य रूप से विश्व के रचयिता नहीं; वे वह द्रव्य हैं जिससे यह बना है, वह साक्षी हैं जो इसके भीतर है, और वह काल हैं जो इसे प्रकट करता तथा समेट लेता है (श्लोक 19)।

4. प्रलय, सृष्टि का विपरीत क्रम में कथन है। तत्त्व तत्त्व में, मन अहंकार में, अहंकार महत्तत्त्व में, और महत्तत्त्व अन्ततः अव्यक्त में लीन होता है, यहाँ तक कि केवल एक आत्मा शेष रह जाती है (श्लोक 21-27)।

5. इस सत्य को देखने से भेद की भ्रान्ति समाप्त हो जाती है। जब मन सृष्टि को उसके मूल स्रोत तक खोज लेता है, पृथकता सूर्योदय के समय अन्धकार से अधिक नहीं टिक सकती (श्लोक 28)।

6. यह सांख्य संशय की गाँठ काटने के लिए दिया गया है। भगवान् इसे अमूर्त दर्शन के रूप में नहीं, अपितु उस संशय का प्रत्यक्ष उपचार मानकर देते हैं जो चंचल मन को प्रतीत होने वाले भेदों से बाँधता है (श्लोक 29)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

यह अनुभव करना गम्भीरतापूर्वक विस्मयकारी है कि जिस भगवान् को हम एक मित्र के रूप में प्रेम करते हैं, वे स्वयं यह बताते हैं कि तारे, ऋतुएँ तथा हमारा अपना मन कैसे अस्तित्व में आए — और उसी श्वास में यह भी कि वे स्वयं मिट्टी, कुम्हार तथा चाक हैं। ऐसी शिक्षा को शुष्क, केवल श्रेणियों तथा कारणों का चित्र, मान लेना सरल है। किन्तु देखिए यह कहाँ ले जाती है: उदासीनता की ओर नहीं, अपितु इस खोज की ओर कि वायु के सूक्ष्मतम श्वास से लेकर सुदूरतम लोक तक, कुछ भी कभी भगवान् के अस्तित्व से बाहर नहीं रहा। अन्धकार जल पर ब्रह्माण्ड का बनना, और नारायण की नाभि से कमल पर ब्रह्मा का उदय देखना, उसी सत्य का सबसे भव्य चित्रण है जो सबसे मौन प्रार्थना में फुसफुसाया जाता है: सब कुछ उन्हीं से आता है, और अन्ततः उन्हीं में लौट जाता है। यह कोई विचार नहीं जिसे एक बार में समझ लिया जाए, अपितु एक ऐसा विचार है जिसमें विश्राम किया जाए — जैसे दीप जल चुकने के बहुत बाद भी मनुष्य अपने परिचित कक्ष में विश्राम करता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, भगवान् के ही लौटने के मार्ग का अभ्यास कीजिए। शान्त बैठिए और अपने मन को स्थिर होने दीजिए। जैसे ही कोई विचार या संवेदना उठे, उसे बाहर की ओर मत दौड़ाइए; धीरे से उसे पीछे की ओर खोजिए — विचार से उस तक जो विचार को देख रहा है, इन्द्रियों से उस मन तक जो उन्हें संगृहीत करता है, मन से उस मौन साक्षी तक जो हृदय में विराजमान है। अन्त में उनके पवित्र नाम का कोमलता से जप कीजिए, “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय,” और क्षण भर के लिए ही सही, इस स्मरण में विश्राम कीजिए कि जिस आत्मा को आप खोज रहे हैं, वह उस भगवान् से कभी पृथक् नहीं जो आपको खोज रहे हैं।

उपसंहार

इस चतुर्विंश प्रवचन में, श्रीकृष्ण उद्धव को सांख्य का प्राचीन दर्शन प्रकट करते हैं, जिससे भेद की मूल भ्रान्ति तत्काल त्यागी जा सकती है। वे दिखाते हैं कि किस प्रकार एक अखण्ड सत्ता पहले प्रकृति तथा पुरुष के रूप में प्रकट हुई; किस प्रकार उनके मिलन से गुण, महत्तत्त्व, अहंकार तथा तत्त्व उत्पन्न हुए; किस प्रकार ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आया, जिसके भीतर गर्भोद्देशायी नारायण थे और जिनकी नाभि के कमल पर ब्रह्मा का जन्म हुआ; और किस प्रकार ब्रह्मा ने त्रिलोक रचे, प्रत्येक गुणों द्वारा निर्मित भाग्यों का क्षेत्र। यह घोषित करते हुए कि वे स्वयं सृष्टि के कारण, अन्तर्यामी पुरुष तथा काल हैं, भगवान् फिर इसी श्रृंखला को विपरीत क्रम में प्रस्तुत करते हैं, यहाँ तक कि केवल एक आत्मा शेष रह जाती है। जो इसे स्पष्ट रूप से देखता है, वे वचन देते हैं, वह पृथकता से पुनः कभी व्याकुल नहीं हो सकता, उससे अधिक नहीं जितना सूर्योदय होने पर अन्धकार टिक सकता है। यही सांख्य है, जैसा उन्होंने स्वयं सिखाया — केवल संशय की गाँठ काटने तथा साधक को घर तक पहुँचाने के लिए दिया गया।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, चतुर्विंश प्रवचन, पृष्ठ 631-634।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेख के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बन्ध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।



ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-24-sankhya-darshan-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट